Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 5, April-2019, ISSN 2230-7540

राष्ट्रवादियों द्वारा आंदोलन

KM. Manisha Singh[1]* Abdul Halim[2]

[1] Research Scholar

[2] Research Guide, CMJ University, Meghalaya

सार – *हमारे पूरे विश्व में उग्रवाद के बढ़ते खतरे से विभिन्न देशों और लोगों को घबराहट होती है। यहां तक कि भारत भी इस समस्या से अलग नहीं है। उग्रवाद आंतरिक सुरक्षा के लिए एक आंतरिक खतरा है। इस घटना को समझने के लिए उग्रवाद के मूल कारण को समझना चाहिए। उग्रवाद एक जटिल घटना है, हालांकि इसकी जटिलता अक्सर देखने में कठिन होती है। सबसे साधारण रूप से, इसे साधारण से दूर किए गए चरित्र की गतिविधियों (विश्वास, दृष्टिकोण, भावनाओं, कार्यों, रणनीतियों) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। उग्रवाद कठोर, हठधर्मी वैचारिक सिद्धांतों के आधार पर एक सजातीय समाज बनाने का प्रयास करते हैंय वे सभी विरोधों को दबाकर और अल्पसंख्यकों को वश में करके समाज के अनुरूप बनाने की तलाश करते हैं। यह उन्हें मात्र कट्टरपंथियों से अलग करता है जो बहुतायत को स्वीकार करते हैं और हठधर्मिता के बजाय तर्क की शक्ति में विश्वास करते हैं।समतावादी समाजों, चरमपंथी समूहों (हिंसक) के संदर्भ में, आंदोलनों और पार्टियों में एक राजनीतिक कार्यक्रम होता है जिसमें कई प्रमुख तत्व शामिल होते हैं*

कुंजी शब्द – *लोकतंत्र-विरोधी, राजनीतिक कार्यक्रम*

----------X----------

परिचय

1892 के पश्चात् जबकि नरमपंथियों के सुधार प्रस्तावों को स्वीकार नहीं किया गया तो गरमपंथियों को अपने विचारों को व्यापक रूप में क्रियान्वित करने का अवसर उपलबध हो गया। इस प्रकार 1905 तक दोनों ही दृष्टिकोण के राष्ट्रवादियों द्वारा आंदोलन को संचालित करने का अवसर मिला तथा प्रत्यक्ष रूप से विरोधी होते हुए भी परोक्षतः राष्ट्रवादी आन्दोलन के विकास में दोनों ने ही सम्पूरक भूमिका निभाई क्योंकि नरमपंथियों द्वारा यदि एक ओर आन्दोलन को आरम्भिक रूप मे ब्रिटिश दमन से बचाया गया, (क्योंकि उनका दृष्टिकोण विधिक और सम्वैधानिक था) तो गरमपंथियों ने भारतीयों के क्षीण मनोबल तथा संकल्प को पुनः प्राप्त करने में सहायता दी। यही कारण है कि आरम्भिक चरण में रखी गयी सुदृढ नीति के सहारे ही राष्ट्रवादी स्वाधीनतावादी आन्दोलन का विकास सम्भव हुआ।

उग्रवादियों के लक्ष्य, विचार, स्रोत तथा कार्यपद्धति को लेकर था, और वे समान रूप से राष्ट्रवादी तथा स्वाधीनतावादी थे। उग्रराष्ट्रीयता के उदय के कारण उग्रराष्ट्रीयता का उदय न तो आकस्मिक था और न ही अन्य परिस्थितियों से अलग एक पृथक परिवर्तन, वरन यह तो विभिन्न घटनाओं परिस्थितियों और शक्तियों का स्वाभाविक परिणाम था।

उग्रवादी राष्ट्रवादी 1892 के अधिनियम से पूर्णतः असंतुष्ट थे। इसे वे अपनी मांगों के साथ मजाक मानते थे। परिषदें नपुंसक थी और सरकार की सत्ता पूर्णतः निरंकुश । अब उनकी माँग यह थी कि विधान परिषदों में गैर-सरकारी निर्वाचित सदस्यों का बहुमत हो और उन्हें बजट पर मतदान करने तथा इस तरह सार्वजनिक कोष पर नियन्त्रण रखने का अधिकार हो। उनका नारा था ष्प्रतिनिधित्व के बिना कर नहीं। असल में अपनी मांगों को उन्होंने धीरे-धीरे एक शक्ल दी।

उदारवादी राष्ट्रवादियों से भिन्न दूसरे प्रकार के राष्ट्रवादी जिन्हें गरमपंथी अथवा अतिवादी कहा गया, अपने विचारों की प्रेरणा भारतीय परम्परा, बौद्धिक साहित्य तथा ऐतिहासिक महापुरूषों से ग्रहण कर रहे थे। पुनः इनका लक्ष्य राष्ट्रवादी एकता सुदृढ करते हुए ब्रिटिश शासन से मुक्ति का था और इसके लिए वे किसी भी प्रकार की कार्य प्रक्रिया को यहाँ तक कि जन-आन्दोलनों द्वारा अपनी मांगों को वैध रूप से मान्यता देने में हिचकिचाहट नहीं करते थे।

www.ignited.in

सम्वैधानिक सुधार की दिशा में राष्ट्रीय कांग्रेस के 7 वर्षों के प्रयत्नों का परिणाम 1892 का भारतीय परिषद अधिनियम था लेकिन यह अधिनियम स्वयं में निहित कमियों और त्रुटियों के कारण राष्ट्रीय कांग्रेस या सामान्य भारतीयों को संतुष्ट नहीं कर सका। इस अधिनियम में औपनिवेशिक तथा प्रान्तीय विधान परिषदों में अतिरिक्त सदस्यों की संख्या बढ़ाकर 6-10 और फिर 10-16 कर दी गयी। इनमें से कुछ का निर्वाचन नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों आदि के जरिए अप्रत्यक्षतः किया जा सकता था, लेकिन सरकारी बहुमत बरकरार रहा। सदस्यों को वार्षिक बजट पर बहस करने का अधिकार भी दे दिया गया, लेकिन । उस पर मतदान करने या उस बारे में कोई संशोधन दाखिल करने के अधिकार से उन्हें वंचित रखा गया। वे सवाल तो पूछ सकते थे लेकिन उनका जवाब आनेपर पूरक सवाल नहीं कर सकते थे और जवाबों पर बहस भी नहीं कर सकते थे। बहरहाल इस संशोधित औपनिवेशिक विधान परिषद की बैठक भी 1909 तक साल में औसतन 13 दिन की दर से ही हुई और गैर सरकारी भारतीय सदस्यों की संख्या थी 24 मे से सिर्फ पाँच ।श् अधिनियम की उपर्युक्त त्रुटियों के कारण सम्वैधानिक पद्धति के आधार पर कुछ प्राप्त कर सकने की आशा समाप्त हो गयी और अब कांग्रेस के अन्दर तथा बाहर एक ऐसे वर्ग का जन्म हुआ जो क्रमिक परिवर्तन के स्थान पर आधारभूत परिवर्तन ओर प्रार्थना के मार्ग के स्थान पर आन्दोलन के मार्ग को अपनाने पर जोर देने लगा।

तिलक एवं कांगेस

तिलक ने 1889 में कांग्रेस में प्रवेश किया था और तब से उनका लक्ष्य कांग्रेस को अधिक से अधिक जन-समर्थन पर आधारित करना था। वे कांग्रेस तथा जनता को एक दूसरे के समीप लाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने महाराष्ट्र में कई जन सम्पर्क के कार्य किये। अगस्त 1893 में बम्बई में भयंकर साम्प्रदायिक दंगे हुए थे, जिनमें तिलक ने हिन्दुओं का पक्ष लिया था तथा हिन्दू-मुस्लिम तनाव के लिए ब्रिटिश नीति को उत्तरदायी ठहराया था। इस समय तिलक ने गणपति उत्सव का विचार उनके मन में आया तथा यह धार्मिक उत्सव जो कि व्यक्तिगत रूप से मनाया जाता था, तिलक ने उसे सार्वजनिक स्वरूप प्रदान किया। तिलक का लक्ष्य इस उत्सव के माध्यम से एक ओर हिन्दू जाति को संगठित करना था तथा दूसरी ओर उनमें राष्ट्रीयता की भावना भरना था। इसके लिए तिलक की आलोचना की गई कि उन्होंने साम्प्रदायिक दंगों के समय से उरो प्रारम्भ किया जिसका लक्ष्य मुसलमानों तथा यूरोपियनों के विरूद्ध घृणा का प्रचार करना है। तिलक की लोकप्रियता दिनों-दिन बढ़ती जा रही थी। उन्होंने जून 1895 में बम्बई व्यवस्थापिता परिषद के निर्वाचन में विजय प्राप्त की तथा जुलाई 1895 में उन्होंने पूना सार्वजनिक सभा पर रानाडे तथा उनके समर्थकों को हराकर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित कर लिया। तिलक ने 15 अप्रैल, 1895 को शिवाजी की जन्म-तिथि पर रायगढ़ से शिवाजी उत्सव का शुभारम्भ किया। वे चाहते थे कि भारतीय शिवाजी के इन गुणों से प्रेरणा ग्रहण करे। वे शिवाजी के माध्यम से जनता में अनन्य राष्ट्रप्रेम तथा स्वतन्त्रता की भावना भर देना चाहते थे। इस उत्सव का लक्ष्य यह भी था कि शिवाजी के नाम पर महाराष्ट्र में हिन्दुओं के सभी वर्गों में एकता की भावना स्थापित करना। शिवाजी उत्सव मुसलमानों के विरूद्ध नहीं था। वे बदली हुई परिस्थितियों में शिवाजी को एक राष्ट्रीय नेता के रूप में रखना चाहते थे।

1916 की लखनऊ

कांग्रेस में उग्रवादियों ने कांग्रेस पर अपना पूर्ण नियन्त्रण स्थापित कर लिया था तथा तिलक की इसमें महत्वपूर्ण भूमिका थी।

तिलक ने ऐनी बेसेन्ट के साथ होमरूल के प्रचार के लिए समस्त देश में भ्रमण किया तथा उग्रवादियों के पक्ष में प्रबल जनमत बनाया। फलस्वरूप 1917 की कलकत्ता कांग्रेस में ऐनी बेसेन्ट अध्यक्ष निर्वाचित हुईं। इससे यह सिद्ध हो गया कि तिलक, गाँधी तथा सी. आर. दास के नेतृत्व में कांग्रेस पूर्णतः उग्रवादियों के नियन्त्रण में था तथा उदारवादियों का प्रभाव अत्यन्त कम हो गया लेकिन वे अभी तक कांग्रेस में बने थे। तिलक इस काल के सर्वाधिक महत्वपूर्ण नता थे और स्वराज्य उनके जीवन का उद्देश्य था। वे इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किसी भी साधन को प्रयुक्त कर सकते थे, क्योंकि श्रीकृष्ण उनके आदर्श थे। वे ब्रिटिश नौकरशाही के जन्मजात प्रबल शत्रु थे। सार्वजनिक रूप से वे जो कुछ भी कहते थे उसका मन्तव्य राजनैतिक होता था और यह आवश्यक नहीं कि वे व्यक्तिगत जीवन में भी वैसा ही विश्वास रखते हों। इसी कारण 1919 की कांग्रेस में उनके और गाँधी जी के बीच मतभेद हुए थे। उस काल में कोई ऐसा अन्य नेता न था जिसकी अत्यधिक प्रशंसा की जाती हो तथा उसका निष्ठापूर्वक अनुसरण किया जाता हो अथवा तीव्र घृणा की जाती हो।

अरविन्द घोष

बंगाल के क्रान्तिकारी आन्दोलन में अरविन्द का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्हीं के प्रेरणा से सैकड़ों बंगाली युवक क्रान्ति के रंगमंच पर आये थे और सैकड़ों हँसते-हँसते फाँसी के तख्ते पर चढ़ गये थे। उन्हीं के प्रेरणा से उनके

www.ignited.in

छोटे भाई वारिन्द्र कुमार घोष भी क्रान्तिकारी बन गये । यद्यपि अरविन्द ने क्रान्तिकारी के रूप में न तो बम बनाया और न ही पिस्तौल से किसी अत्याचारी गोरे की हत्या की। किन्तु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सशस्त्र क्रान्ति के लिए उन्हीं के ओजस्वी शब्दों से प्रेरणा प्राप्त हुई थी। 1906-07 ई. के मध्य में बंगाल के विभाजन के प्रश्न को लेकर सारे बंगाल में बड़े जोरों का आन्दोलन हुआ। ये आन्दोलन दो प्रकार का था-प्रगट और गुप्त । प्रगट आन्दोलन उन नेताओं के द्वारा चलाया जा रहा था जो अहिंसा में विश्वास रखते थे। गुप्त आन्दोलन क्रान्तिकारियों का आन्दोलन था। बंगाल में दोनों प्रकार के आन्दोलनों की धूम थी। उनके कार्यक्रम थे-बहिष्कार, स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और सत्याग्रह। वे हिन्दू धर्म के पुनर्जागरण के समर्थक थे। उन्होंने स्वाधीनता तथा अधिकार के विचारों का भारत की धार्मिक परम्परा के अनुकूल व्याख्या की। उन्होंने श्लोकतन्त्रात्मक स्वराज्यश् के विचार का प्रतिपादन किया। उनकी योजना के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश के लिए एक संघ होगा, जो स्वायत्तशाली प्रान्तों, जिलों तथा ग्रामों में विभाजित होगा।

महाराष्ट्र में क्रांतिकारी आन्दोलन

क्रान्तिकारी राष्ट्रवाद का प्रथम उत्कर्ष महाराष्ट्र में हुआ। वासुदेव बलवन्त फड़के ने महाराष्ट्र में क्रांतिकारी आन्दोलन का बीजारोपण किया, वे अविलम्ब ब्रिटिश सरकार का अन्त कर प्रजातान्त्रिक सरकार की स्थापना करना चाहते थे। लेकिन जब उनकी सरकार विरोधी भावना का आभास सरकार को मालूम हुआ तब सरकार ने उनपर मुकद्दमें चलाये तथा उन्हें आजीवन कारावास की सजा दी गयी।

श्री दामोदर चापेकर तथा श्री बालकृष्ण चापेकर जैसे महान क्रांतिकारियों ने क्रांतिकारी आन्दोलनों में भी महान प्रगति उत्पन्न की। इन दो बन्धुओं ने शिवाजी उत्सव के समय खुले रूप से आह्वान किया था कि श्हम राष्ट्रीय युद्ध के मैदान पर अपने जीवन का बलिदान कर देंगे। आज उन लोगों के रक्तपात से भी जो हमारे धर्म को नष्ट कर रहे हैं या आघात पहुँचा रहे हैं, पृथ्वी को रंग देंगे।

हिन्दू धर्म 'संरक्षिणी सभाश् नाम की क्रान्तिकारी संस्था के संस्थापक चापेकर बन्धुओं ने पूना के बदनाम प्लेग कमीश्नर रैण्ड तथा उसके सहायक लेफ्टिनेन्ट चार्ल्स ऐयर्स्ट की हत्या कर दी जब ये महारानी विक्टोरिया का 60वाँ राज्याभिषेक मनाकर आ रहे थे। यह घटना 1898 ई. में घटी। दामोदर चापेकर, रैण्ड की हत्या करने में तथा बालकृष्ण चापेकर लेफ्टिनेन्ट ऐयर्स्ट की हत्या करने में सफल रहे। चापेकर बन्धु देशप्रेम की भावना से प्रज्ज्वलित हो रहे थे तथा भारतीयों पर किये जा रहे दैनिक अत्याचारों से ऊबकर ये इन अफसरों की हत्या करने को प्रवृत्त हुए थे। प्लेग के समय महारानी के राज्याभिषेक उत्सव का मनाना, इन लोगों के विचार से न्यायोचित नहीं था।

इन घटनाओं के फलस्वरूप 18 अप्रैल, 1898 को दामोदर चापेकर को तथा 12 मई, 1899 ई. को बालकृष्ण चापेकर को फाँसी की सजा दी गयी। चापेकर बन्धुओं को फाँसी की सजा देकर ब्रिटिश सरकार ने अपनी दमनपूर्ण नीति का परिचय दिया लेकिन भविष्य के सन्दर्भ में सरकार की यह नीति सरकार के लिए ही हानिकारक सिद्ध हुई। इस दोहरी हत्या के बाद सरकार ने महाराष्ट्र को अपनी दमनकारी नीतियों का निशाना बनाया था, जिसके परिणामस्वरूप तिलक को 18 मई को सश्रम कारावास तथा नाटू बन्धुओं को देश निष्काशन की सजा दी गयी।

अध्ययन का उद्देश्य

1. राष्ट्रवादियों द्वारा आंदोलन को संचालित करने का अवसर मिला
2. बहिष्कार, स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और सत्याग्रह का अध्ययन

निष्कर्ष

क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए अस्त्र-शस्त्र का भी संग्रह तथा प्रयोग किया। कारण, ब्रिटिश सरकार अपने दक्ष, कुशल एवं प्रशिक्षित सैनिकों द्वारा सदा उन पर बल प्रयोग तथा अत्याचार करती थी। अतः क्रांतिकारियों ने भी अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग करना उचित एवं आवश्यक समझा। क्रांतिकारियों में पुलिस कर्मियों एवं सैनिकों से भी अधिक निर्भिकता, शारीरिक बल एवं आत्मिक शक्ति थी। यही कारण था कि विषय एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में भी उनमें धैर्य, साहस और मनोबल बना रहा। भारत का राष्ट्रीय संघर्ष ब्रिटिश शासकों के अत्याचार एवं दमन से जब कभी दबता हुआ दिखाई पड़ा, उस समय क्रांतिकारियों ने कोई न कोई हत्या एवं बम विस्फोट कर शिथिल पड़ रहे स्वतंत्रता-संघर्ष को जीवित रक्खा तथा उसे नई दिशा दो। इस प्रकार क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता-संघर्ष के प्रवाह को कभी अवरुद्ध नहीं होने दिया। उनके अन्दर शारीरिक एवं आत्मिक दोनों प्रकार की शक्तियाँ थी। अतः वे पराधीनता में जीना कदापि स्वीकार नहीं कर सकते थे।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने महात्मा गांधी के नेतृत्व मे अहिंसात्मक आन्दोलनों एवं नैतिक साधनों द्वारा राष्ट्रीय संघर्ष को आगे बढ़ाया। वहीं कार्य क्रांतिकारियों ने हिंसात्मक ढ़ग से किया। मातृभूमि की मुक्ति के लिए किये गये त्याग एवं बलिदान के कारण ही चापेकर बन्धु, वीर सावरकर, शचीन्द्रनाथ सान्याल, भगत सिंह, चन्द्रेशखर आजाद, सूर्यसेन आदि क्रांतिकारी नेता देश में लोकप्रिय हुए और जनता की दृष्टि में श्रद्धा एवं सम्मान के पात्र बने।

संदर्भ

1. कसवॉ, राजेन्द्र - क्रांतिकारी भगवती भाई, दिल्ली, 1974
2. कारिन्दकर, एस.एल.- लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, पूना, 1957
3. काशीराम क्रांति के दो दिन, मिर्जापुर, 1976
4. क्रान्त मदल लाल - सरफरोशी की तमन्ना, भाग तीन, प्रवीण वर्मा (सं0) प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997
5. कश्यप, सुभाष - स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली, विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1997
6. की, धनंजय - सावरकर एण्ड हिज टाइम्स, बम्बई, 1950
7. खत्री, रामकृष्ण - शहीदों की छाया में, नागपुर, 1983
8. खुल्लर, के0के0 - शहीद भगत सिंह, कुछ अधखुले पृष्ठ, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1998 16.
9. गुहा, अरुण चन्द्र - फर्स्ट स्पार्क आफ रिवोल्यूशन, दिल्ली, 1971
10. गुप्त, मन्मथनाथ - भारत में सशस्त्र क्रान्ति चेष्टा का रोमांचकारी इतिहास, (भाग-एक), 1952
11. गोपाल, शिवकुमार - वीर सावरकर, प्रवीण प्रकाशन नई दिल्ली, 1998
12. गौड़, धर्मेन्द्र आजाद के गद्दार साथी, मिर्जापुर, 1975

Corresponding Author

KM. Manisha Singh*

Research Scholar

www.ignited.in